OPEN ACCESS

Ind. Jr. of Mod. Res. and Rev *PEER-REVIEWED JOURNAL* *Volume 4 Issue 6 [Jun] Year 2026*

Indian Journal of Modern Research and Reviews

This Journal is a member of the *'Committee on Publication Ethics'*

Online ISSN:2584-184X

Research Article

मध्यकालीन समाज एवं सैन्य जीवन में रासो साहित्य एवं महिलाओं की भूमिका

प्रेम शंकर पालीवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी साहित्य अतिथि संकाय, विश्वविद्यालय कन्या महाविद्यालय, बिलौता, राजसमंद
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान भारत

Corresponding Author: * प्रेम शंकर पालीवाल

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.20791870

सारांश

रासो साहित्य हिंदी साहित्य के आदिकाल की वीरगाथात्मक परंपरा का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और गौरवपूर्ण अंग है। यह साहित्य केवल युद्ध, वीरता और राजाओं की विजय-गाथाओं का वर्णन मात्र नहीं करता, बल्कि मध्यकालीन भारतीय समाज की सामंतवादी संरचना, सामाजिक मूल्यों, नारी की गरिमा, सैन्य संगठन, स्वामी भक्ति, बलिदान-चेतना तथा सांस्कृतिक मानसिकता का प्रामाणिक और सजीव दस्तावेज भी प्रस्तुत करता है। विशेषतः पृथ्वीराज रासो, बीसलदेव रासो, परमाल रासो तथा हम्मीर रासो जैसे ग्रंथों में तत्कालीन समाज एवं सैन्य जीवन का बहुआयामी चित्रण मिलता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में रासो साहित्य की सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं सैन्य भूमिका का विस्तृत विश्लेषण किया गया है।प्रस्तुत शोध पत्र मध्यकालीन भारत की 'रासो काव्य' परंपरा के माध्यम से तत्कालीन समाज और सैन्य जीवन का गहन विश्लेषण करता है। रासो साहित्य मात्र चारण-भाटों की काव्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि वह उस युग की सामंती व्यवस्था, क्षत्रिय मूल्यों, युद्ध कौशल और सामाजिक मान्यताओं का एक प्रामाणिक प्रलेख है। शोध का मुख्य उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि रासो ग्रंथों ने किस प्रकार जनमानस में 'शौर्य' की संस्कृति को प्रतिस्थापित किया और युद्ध को एक 'उत्सव' के रूप में रूपांतरित किया। शोध में पृथ्वीराज रासो, खम्माण रासो और हम्मीर रासो जैसी कृतियों के साक्ष्यों के माध्यम से सैन्य संगठन, हथियारों के प्रयोग और 'नमक की मर्यादा' के सिद्धांतों को रेखांकित किया गया है। यह पत्र यह निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि रासो साहित्य मध्यकालीन इतिहास-लेखन में एक प्राथमिक सांस्कृतिक और सामरिक स्रोत की भूमिका निभाता है। रासो साहित्य मध्यकालीन भारत का 'सांस्कृतिक कवच' था। इसने समाज को संगठित रखा और सैन्य जीवन को एक ऊँचा आदर्श प्रदान किया। यद्यपि इनमें ऐतिहासिक अतिशयोक्तियाँ मिलती हैं, किंतु उस युग के सामाजिक मनोविज्ञान, शस्त्रास्त्रों की जानकारी और युद्ध नीतियों को समझने के लिए ये ग्रंथ अनिवार्य स्रोत हैं। यह साहित्य आज भी 'राष्ट्र रक्षा' और 'आत्मसम्मान' की प्रेरणा देता है।मध्यकालीन भारतीय इतिहास, विशेषकर राजस्थान का इतिहास, शौर्य और बलिदान की गाथाओं से ओत-प्रोत है। इस कालखंड की सबसे महत्वपूर्ण साहित्यिक निधि 'रासो साहित्य' है। यह साहित्य केवल काव्य नहीं, बल्कि तत्कालीन समाज की मान्यताओं और सैन्य विज्ञान का एक जीवंत दस्तावेज है।

Manuscript Information

- **ISSN No:** 2584-184X
- **Received:** 27-05-2026
- **Accepted:** 20-06-2026
- **Published:** 22-06-2026
- **IJCRM:**4(6); 2026: 207-210
- **©2026, All Rights Reserved**
- **Plagiarism Checked:** Yes
- **Peer Review Process:** Yes

How to Cite this Article

प्रेम शंकर पालीवाल. मध्यकालीन समाज एवं सैन्य जीवन में रासो साहित्य एवं महिलाओं की भूमिका. Indian J Mod Res Rev. 2026;4(6):207-210.

Access this Article Online

www.mrrjournal.in

मुख्य शब्द: रासो साहित्य, मध्यकालीन समाज, सैन्य जीवन, वीरगाथा, पृथ्वीराज रासो, चंदबरदाई।

© 2026 प्रेम शंकर पालीवाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के आदिकाल को आचार्य **रामचंद्र शुक्ल** ने "वीरगाथा काल" की संज्ञा दी है। इस युग का प्रमुख साहित्य रासो काव्य है, जिसमें राजपूत वीरता, कुल-गौरव, स्वामीभक्ति और युद्ध-संस्कृति का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है। रासो साहित्य तत्कालीन समाज की सामूहिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है और वीर आदर्शों को प्रतिष्ठित करता है।

"स्वामी हित सिर काटिए, तन मन धन सब वार। यही क्षत्रिय कुल धर्म है, यही वीर व्यवहार॥"

यह दोहा मध्यकालीन समाज के मूल आदर्श—निष्ठा, धर्म और बलिदान को व्यक्त करता है।

1. रासो साहित्य का स्वरूप एवं विकास

रासो साहित्य का विकास मुख्यतः राजदरबारों में हुआ। राजकवि अपने आश्रयदाता राजाओं की वीरता, युद्ध-कौशल और विजय-गाथाओं का वर्णन करते थे। इस साहित्य की शैली ओजपूर्ण, उत्साहवर्धक और वीरता से परिपूर्ण है।

प्रमुख रासो ग्रंथ एवं रचनाकार

1. **पृथ्वीराज रासो — चंदबरदाई**
2. **बीसलदेव रासो — नरपति नाल्ह**
3. **परमाल रासो — जगनिक**
4. **हम्मीर रासो — शार्ङ्गधर**
5. **खुमाण रासो — दलपति विजय**
6. **विजयपाल रासो नल्लसिंह भाट**

"अग्र चले नृप वीर दल, पीछे ध्वज अपार।"

यह पंक्ति सैन्य अनुशासन और संगठन का प्रतिनिधित्व करती है।

1. पृथ्वीराज रासो: भारतीय वीरता का महाकाव्य:-

चंदबरदाई द्वारा रचित यह ग्रंथ हिंदी का प्रथम महाकाव्य माना जाता है, जिसमें ६९ सर्ग (समय) हैं। इसका कथानक दिल्ली के शासक पृथ्वीराज चौहान के इर्द-गिर्द घूमता है।इसका आरंभ पृथ्वीराज के उदय और उनके विभिन्न विवाहों से होता है, किंतु इसका मुख्य आकर्षण राजा जयचंद की पुत्री संयोगिता के साथ उनका प्रेम प्रसंग है। जयचंद ने पृथ्वीराज को नीचा दिखाने के लिए राजसूय यज्ञ किया और अपनी पुत्री के स्वयंवर में पृथ्वीराज की लोहे की प्रतिमा द्वारपाल के रूप में खड़ी कर दी। संयोगिता ने उसी प्रतिमा के गले में वरमाला डाल दी, जिसके बाद पृथ्वीराज उसे भरी सभा से उठाकर ले गए। यह घटना कन्नौज और दिल्ली के बीच भीषण शत्रुता का कारण बनी।

ग्रंथ का उत्तरार्ध युद्धों से भरा है। जब मोहम्मद गौरी ने भारत पर आक्रमण किया, तो पृथ्वीराज ने उसे कई बार पराजित किया और क्षमा कर दिया। किंतु अंत में विश्वासघात के कारण पृथ्वीराज बंदी बना लिए गए। कथानक का चरमोत्कर्ष गजनी में होता है, जहाँ अंधे किए जा चुके पृथ्वीराज 'शब्दभेदी बाण' के माध्यम से चंदबरदाई के दोहे— "चार बाँस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमान। ता ऊपर सुल्तान है, मत चूको चौहान" । की सहायता से गौरी का वध कर देते हैं। यह काव्य प्रेम, प्रतिशोध और राष्ट्रभक्ति का अद्भुत दस्तावेज है।

2. बीसलदेव रासो: विरह और प्रेम की कोमल अनुभूतियाँ:-

नरपति नाल्ह द्वारा रचित यह ग्रंथ वीरगाथा काल की अन्य रचनाओं से एकदम भिन्न है। जहाँ अन्य ग्रंथों में तलवारों की खनक है, वहाँ इसमें हृदय की टीस और विरह का वर्णन है।इसका कथानक चार खंडों में विभाजित है। प्रथम खंड में अजमेर के राजा बीसलदेव और मालवा की अत्यंत विदुषी राजकुमारी राजमती के विवाह का वर्णन है। द्वितीय खंड में राजमती की एक व्यंग्यात्मक बात (राजा के गर्व को ठेस पहुँचाने वाली बात) से रुष्ट होकर राजा बीसलदेव उड़ीसा चले जाते हैं। वे अपनी रानी को छोड़कर पूरे बारह वर्षों तक घर नहीं लौटते।

तृतीय खंड इस काव्य की आत्मा है, जिसमें राजमती के विरह का वर्णन किया गया है। वह पक्षियों के माध्यम से संदेश भेजती है और अपनी अकेली स्थिति पर विलाप करती है। कवि ने इसमें 'बारहमासा' के जरिए प्रकृति और नारी हृदय की व्याकुलता का सजीव चित्रण किया है। चतुर्थ खंड में राजा वापस आते हैं और राजमती को अपने साथ ले जाते हैं। यह ग्रंथ दर्शाता है कि रासो साहित्य केवल युद्धों का नहीं, बल्कि गृहस्थ जीवन के रूठने-मनाने और अटूट प्रेम का भी साहित्य है।

3. परमाल रासो (आल्हा खंड): जन-जन की वीरगाथा:-

महोबा के राजा परमाल के दरबारी कवि जगनिक ने इस ग्रंथ की रचना की। यह ग्रंथ लिखित रूप से अधिक मौखिक (लोकगीतों) के रूप में प्रसिद्ध है इसमें महोबा के दो वीर भाइयों, आल्हा और ऊदल के शौर्य की ५२ लड़ाइयों का विस्तृत वर्णन है। ये दोनों बनाफर वंश के थे और अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार थे। कथानक में दिखाया गया है कि कैसे ईर्ष्या के कारण उन्हें राज्य से निकाल दिया जाता है, लेकिन जब महोबा पर संकट आता है, तो वे अपने पुराने अपमान को भूलकर वापस आते हैं।

इनकी वीरता का स्तर इतना ऊंचा दिखाया गया है कि वे असाधारण शक्तियों से लड़ते प्रतीत होते हैं। आल्हा को 'अमर' माना गया है। इस काव्य का मुख्य स्वर 'वीर रस' है। इसकी पंक्तियाँ आज भी बुंदेलखंड और उत्तर भारत के गाँवों में युवाओं में जोश भर देती हैं। यह ग्रंथ सामंती समाज में 'साख' और 'सम्मान' के लिए प्राण देने की परंपरा का जीवंत उदाहरण है।

4. खुमाण रासो और हम्मीर रासो: त्याग और शरणागत की रक्षा:-

खुमाण रासो (दलपति विजय) में चित्तौड़ के शासक खुमाण के युद्धों का वर्णन है, जिसमें बगदाद के खलीफा अलमामूँ के साथ उनके संघर्ष को दिखाया गया है। इसमें भारतीय राजाओं के संगठन और विदेशी आक्रमणकारियों के विरुद्ध उनकी एकजुटता का चित्रण है।

वहीं, हम्मीर रासो (शारंगधर) रणथंभौर के राजा हम्मीर देव के चरित्र पर आधारित है। इसका कथानक 'हठ' और 'शरणागत रक्षा' के इर्द-गिर्द बुना गया है। हम्मीर ने अलाउद्दीन खिलजी के विद्रोही सेनापति को शरण दी थी। खिलजी द्वारा मांगे जाने पर भी हम्मीर ने शरणार्थी को सौंपने से मना कर दिया, भले ही इसके लिए उन्हें अपना पूरा परिवार और राज्य कुर्बान करना पड़ा। यह काव्य भारतीय संस्कृति के उस आदर्श को प्रस्तुत करता है जहाँ 'अतिथि' और 'शरणागत' के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करना सबसे बड़ा धर्म माना गया है।

© 2026 प्रेम शंकर पालीवाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

2. रासो साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ

रासो साहित्य की सर्वप्रमुख विशेषता इसकी **वीरगाथात्मक प्रवृत्ति** है। इसमें युद्ध, शौर्य, पराक्रम, बलिदान और स्वामीभक्ति का अत्यंत ओजस्वी वर्णन मिलता है। यह साहित्य सैनिकों में उत्साह और वीरता की भावना उत्पन्न करता था।

"बारह बरस लै कूकर जीवे, अरु सोलह लै जिए सियार। बरस अठारह क्षत्रिय जीवे, आगे जीवन को धिक्कार॥"

यह दोहा क्षत्रिय जीवन के आदर्श और गौरवपूर्ण मृत्यु की अवधारणा को व्यक्त करता है।

रासो साहित्य की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता इसका **ऐतिहासिक और सामाजिक महत्व** है। इसमें तत्कालीन सामंतवादी समाज, शक्ति-संरचना, सामाजिक मूल्यों और कुल-गरिमा का सजीव चित्रण मिलता है।

इस साहित्य की एक अन्य विशेषता **सैन्य जीवन का यथार्थ चित्रण** है। सेना का गठन, शस्त्र-विन्यास, हाथी-दल, घुड़सवार, धनुर्धर और रणभूमि का विस्तृत वर्णन इसमें मिलता है

"कटि कटार कर कृपाण, भुज बल सागर समान।"

3. मध्यकालीन समाज का स्वरूप एवं स्त्रियों की भूमिका:-

रासो काव्य में चित्रित समाज एक सुदृढ़ सामंती ढांचे पर आधारित था। यहाँ राजा को केवल शासक नहीं बल्कि 'भूमिया' अर्थात् धरती का रक्षक और रक्षक देवता के समान माना जाता था। समाज में प्रत्येक वर्ग का युद्ध में विशिष्ट योगदान था। जहाँ क्षत्रिय रणक्षेत्र में अग्रणी थे, वहीं अन्य वर्ग सैन्य रसद, सूचना तंत्र और आर्थिक प्रबंधन का दायित्व संभालते थे। सामंतों और जागीरदारों का अपने राजा के प्रति दायित्वों का निर्वहन करते थे मध्यकालीन समाज मूलतः सामंतवादी था। राजा सत्ता का केंद्र था और उसके अधीन सामंत, सैनिक तथा प्रजा का संगठन था। इस व्यवस्था में स्वामीभक्ति और कुल-मर्यादा को सर्वोच्च महत्त्व प्राप्त था।

"राजा धरम सम, प्रजा जीवन आधार।"

नारी की स्थिति एवं मध्यकालीन समाज में भूमिका:-

रासो साहित्य में नारी को केवल सौंदर्य की प्रतीक नहीं, बल्कि कुल-गरिमा, प्रेरणा और सांस्कृतिक चेतना की वाहक के रूप में चित्रित किया गया है।

"**कुल की लाज नारी सदा, वीरन की प्रेरार। जिनके नैनन तेज से, जगत रहे उजियार॥"**

1. प्रेरणा और शक्ति का स्रोत (वीरांगना रूप)

रासो साहित्य में नारी केवल महलों तक सीमित नहीं थी। वह पुरुषों को युद्ध के लिए प्रेरित करने वाली और आवश्यकता पड़ने पर स्वयं शस्त्र उठाने वाली शक्ति थी।

प्रसिद्ध पंक्ति (पृथ्वीराज रासो):

"कुहुकि कुहुकि कोयल रटै, धरि धरि बोलहिं मोर। पिय पायो रन खेत में, हँसि हँसि कीन्हों सोर।।"

(अर्थ: जब पति युद्धक्षेत्र में वीरगति को प्राप्त होता है, तो वीरांगना विलाप करने के बजाय गर्व से हँसती है कि उसके पति ने कायर की तरह पीठ नहीं दिखाई।)

2. सौंदर्य और विलासिता का केंद्र

रासो काव्य में राजाओं के युद्धों का एक बड़ा कारण नारी का सौंदर्य रहा है। संयोगिता (पृथ्वीराज रासो) और पद्मावती (पद्मावत – हालांकि यह सूफी काव्य है, पर रासो परंपरा का प्रभाव है) जैसे पात्रों के माध्यम से नारी को अपूर्व सुंदरी के रूप में दिखाया गया है।

प्रसिद्ध पंक्ति (पृथ्वीराज रासो – संयोगिता के लिए):

"मनहुँ काम कामिनि रची, रचि राख्यौ करतार। सकल अंग निरदोष अति, सोभा अमित अपार।।"

3. सतीत्व और आत्मसम्मान की रक्षा (जौहर)

समाज में नारी के सतीत्व को सर्वोपरि माना जाता था। जब पुरुष युद्ध हार जाते थे, तो स्त्रियाँ अपनी मर्यादा की रक्षा के लिए 'जौहर' (अग्नि में कूदना) को सहर्ष स्वीकार करती थीं। यह उनके अडिग साहस का परिचायक था। चंदबरदाई के काव्य में नारी के बलिदान और सतीत्व की रक्षा को वीर रस के साथ जोड़ा गया है:

"मान घटै तौ मरन भल, कुल को लगै न दाग। जौहर की पावक बली, सती हुई तजि पाग।। "

4. विरह और वेदना (बीसलदेव रासो)

जहाँ 'पृथ्वीराज रासो' युद्ध प्रधान है, वहीं 'बीसलदेव रासो' नारी के विरह और उसकी भावनाओं का सूक्ष्म चित्रण करता है। यहाँ राजमती के माध्यम से नारी के उपालंभ (शिकायत) और उसकी बौद्धिकता को दर्शाया गया है।

प्रसिद्ध पंक्ति (बीसलदेव रासो):

"अस्त्री जनम काईं दिधौ महेस, अवर जनम थारै घणा रे नरेश।"

(अर्थ: हे ईश्वर! आपने स्त्री का जन्म क्यों दिया? इससे अच्छा तो कोई और जन्म दे दिया होता, क्योंकि स्त्री को विरह और पराधीनता का बहुत कष्ट सी पड़ता है।

4. सैन्य जीवन में रासो साहित्य की भूमिका

रासो साहित्य सैनिकों के लिए प्रेरणा-स्रोत था। युद्ध से पूर्व वीरता और आत्मबल बढ़ाने हेतु इस प्रकार की पंक्तियाँ गाई और सुनाई जाती थीं।

"धनुष चढ़ायो चौहान नृप, छूटी सायक धार। शत्रु दलन भय कंपित भए, डोल उठ्यो संसार॥"

यह पंक्ति युद्ध-कौशल और वीरता का उत्कृष्ट उदाहरण है। रासो साहित्य में सेना के चार प्रमुख अंगों का सांगोपांग वर्णन मिलता है, जो तत्कालीन युद्ध कला की जटिलता और वैज्ञानिक सोच को दर्शाता है:-

1. **हस्ती सेना:** हाथियों को मध्यकालीन युद्धों में अभेद्य दीवार और शक्ति का प्रतीक माना जाता था। खुमाण रासो में हाथियों के माथे पर लगी 'पाखर' (लोहे की सुरक्षा ढाल) और उनकी सूंड में बंधी तलवारों का विशेष उल्लेख है।
2. **अश्व सेना:** राजस्थानी घोड़ों की गति, वफादारी और उनकी विभिन्न नस्लों पर पृथ्वीराज रासो के कई छंद केंद्रित हैं। घोड़ों को युद्ध का 'प्राण' माना जाता था।
3. **पैदल सेना:** ये सैनिक दुर्गों की रक्षा, पर्वतीय क्षेत्रों में छापामार युद्ध पद्धतियों और हाथ-से-हाथ की लड़ाई में निपुण थे।
4. **रण-वाद्य**: नगाड़ा, तुरही और शंख जैसे वाद्य यंत्रों का प्रयोग केवल शोर के लिए नहीं, बल्कि सैन्य संचार और सैनिकों का उत्साहवर्धन करने के लिए किया जाता था। विशेष ध्वनियों के

© 2026 प्रेम शंकर पालीवाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

माध्यम से सेना को पीछे हटने या आक्रमण करने के संकेत दिए जाते थे।

काव्य साक्ष्य:
बज्जिय घोर निसान रान चौहान चहुँ दिसि। सकल सूर सामंत समर सम्मिय बर कहुँ दिसि॥
(संदर्भ: पृथ्वीराज रासो, रेवा तट समय, दोहा संख्या: 12,) शस्त्रास्त्र एवं दुर्ग-रक्षण कला)
मध्यकालीन युद्ध कौशल को समझने के लिए रासो ग्रंथों में वर्णित हथियारों की सूची अत्यंत महत्वपूर्ण है। जमधर, खड्ग, सांग और बरछा के प्रहार करने के विशिष्ट तरीकों का वर्णन इन ग्रंथों में मिलता है। योद्धाओं के कवच, शिरस्त्राण (हेलमेट) और ढालों की मज़बूती पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इसके अतिरिक्त, दुर्ग केवल निवास स्थान नहीं बल्कि स्वयं में एक 'सामरिक यंत्र' थे। चित्तौड़गढ़ और रणथंभौर जैसे दुर्गों के बुर्जों पर तैनात रक्षा प्रणालियों, गुप्त द्वारों और रसद संग्रहण के तरीकों का रासो काव्य में सूक्ष्म वर्णन है, जो आज भी सैन्य इतिहासकारों के लिए शोध का विषय है।

5. प्रसिद्ध शब्दभेदी बाण प्रसंग
रासो साहित्य की सर्वाधिक प्रसिद्ध पंक्ति—
"चार बाँस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमाण। ता ऊपर सुलतान है, मत चूके चौहान॥"
यह दोहा पृथ्वीराज चौहान की शब्दभेदी बाण विद्या और रण-कौशल का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।

6. सामाजिक एवं सैन्य संस्कृति का अंतर्संबंध
रासो साहित्य से स्पष्ट होता है कि मध्यकालीन समाज में युद्ध केवल राजनीतिक संघर्ष नहीं था, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा, कुल-गौरव और राज्य-अस्मिता का प्रश्न भी था।
"रन बीच मरन सुहावनो, अमर भए रणधीर। जग में वही पुकारिए, साचा कुल के वीर॥"

7. आलोचक मत
आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार रासो साहित्य तत्कालीन युद्ध-प्रधान समाज की मानसिकता का प्रतिनिधि साहित्य है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार रासो साहित्य (विशेषकर पृथ्वीराज रासो) की प्रामाणिकता और साहित्यिक महत्व पर विचार करते हुए यह माना था कि रासो साहित्य इतिहास और कल्पना का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत करता है।

8. निष्कर्ष
निष्कर्षतः रासो साहित्य मध्यकालीन समाज एवं सैन्य जीवन का दर्पण है। इसमें तत्कालीन सामाजिक संरचना, युद्ध-नीति, वीरता, नारी गरिमा, सामंतवादी मूल्य तथा सांस्कृतिक चेतना का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है। यह साहित्य हिंदी साहित्य के साथ-साथ भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक इतिहास के अध्ययन में भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।रासो साहित्य आज भी भारतीय जनमानस में सांस्कृतिक कवच की तरह है। पृथ्वीराज चौहान, हम्मीर देव और खुमाण जैसे नायक आज भी लोक-चेतना में जीवित हैं। यह साहित्य हमें अनुशासन, स्वामी-भक्ति और विपरीत परिस्थितियों में भी स्वाभिमान न खोने का संदेश देता है।
संक्षेप में, रासो साहित्य मध्यकालीन भारत का वह ओजस्वी स्वर है जिसने तलवार की खनक और कलम की धार के मेल से एक ऐसी योद्धा संस्कृति का निर्माण किया, जिसने सदियों तक विदेशी आक्रांताओं के विरुद्ध भारत के मनोबल को बनाए रखा। साहित्य की दृष्टि से यह हिंदी का 'स्वर्ण-शौर्य अध्याय' है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शुक्ल आचार्य रामचंद्र. हिंदी साहित्य का इतिहास. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा; पृ. 30-42.
2. द्विवेदी हजारीप्रसाद. हिंदी साहित्य की भूमिका. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
3. मेनारिया पुरुषोत्तम लाल. पृथ्वीराज रासो. जयपुर: राजस्थान प्रकाशन, हिंदी साहित्य अकादमी; पृ. 1-22, 113-124.
4. स्वामी नरोत्तम दास. रासो-साहित्य और पृथ्वीराज-रासो. बीकानेर: भारतीय विद्यामंदिर शोध प्रतिष्ठान; 1962. पृ. 1-50.
5. सिंह नामवर. पृथ्वीराज रासो: भाषा और साहित्य. नई दिल्ली: डॉ. राधाकृष्ण प्रकाशन; 2022. पृ. 272.
6. पंड्या मोहनलाल विष्णुलाल, संपादक. पृथ्वीराज रासो. काशी: नागरी प्रचारिणी सभा; पृ. 1-42.
7. गुप्त माताप्रसाद, संपादक. बीसलदेव रासो. इलाहाबाद: हिन्दी परिषद प्रकाशन; पृ. 60-83.
8. इलियट चार्ल्स, दास श्यामसुन्दर, संपादक. परमाल रासो. फर्रुखाबाद/काशी; पृ. 1-26.

Creative Commons License
This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution–Non-commercial–No Derivatives 4.0 International (CC BY-NC-ND 4.0) License. This license permits users to copy and redistribute the material in any medium or format for non-commercial purposes only, provided that appropriate credit is given to the original author(s) and the source. No modifications, adaptations, or derivative works are permitted.

About the Corresponding Author

Prem Shankar Paliwal is an Assistant Professor (Guest Faculty) in Hindi Literature at University Girls College, Bilota, Rajsamand, affiliated with Mohanlal Sukhadia University, Udaipur, Rajasthan, India. He is actively engaged in teaching, research, and academic activities related to the Hindi language and literature. His areas of interest include literary studies, language education, and scholarly research, contributing to the promotion and development of Hindi literature.

© 2026 प्रेम शंकर पालीवाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/